राज्य के नीति निर्देशक तत्व

परिचय –

भारत में आजादी के बाद एक लोककल्याणकारी एवं समाजवादी राज्य की स्थापना करने के उद्देश्य से नीति निर्देशक तत्वों का निर्माण भारतीय संविधान र्निमाताओं द्वारा किया गया है। भारतीय संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 36–51 के तहत, 16 अनुच्छेदों में उल्लिखित राज्य के निदेशक तत्वों का विचार संविधान निर्माताओं द्वारा आयरलैण्ड के संविधान से लिया गया है। संविधान की प्रस्तावना में जिन उद्देश्यों को प्रकट किया गया है उन्हें व्यावहारिक रूप देने के लिए निदेशक तत्वों को संविधान में शामिल किया गया है। ये निदेशक सिद्धांत हमारे संविधान की संजीवनी व्यवस्थाएं हैं। इन सिद्धांतों में हमारे संविधान का और उसके सामाजिक न्याय दर्शन का वास्तविक अभिप्राय परिलक्षित होता है। इनमें शासन के विभिन्न क्षेत्रों में राज्य के कार्य क्षेत्र पर विचार किया गया है। वास्तव में निदेशक तत्व देश की सरकारों और अभिकरणों के नाम जारी किए गए निर्देश हैं, जो देश की शासन व्यवस्था के मौलिक तत्व हैं। इनका मुख्य प्रयोजन शान्तिपूर्ण तरीकों से सामसजिक क्रांति का पथ प्रशस्त कर सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र स्थापित करना है। ये सिद्धांत उच्च आदर्शों की घोषणाएं करते हैं, जो राज्यों के लिए शासन के मौलिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए पथ प्रर्दशक का कार्य करते हैं।

संविधान सभा के संवैधानिक सलाहकार सर बी.एन.राव ने संविधान सभा में प्रारूप समिति के सामने ये परामर्श दिया था कि भारत की तत्कालिक आर्थिक स्थिति को देखते हुए व्यक्तिक अधिकारों को दो भागों न्यायोचित और गैर न्यायोचित में बांटना चाहिए, जिसे प्रारूप समिति द्वारा स्वीकार कर लिया गया था और न्यायोचित प्रकृति वाले अधिकारों को मूल अधिकारों के अंतर्गत तथा गैर न्यायोचित प्रकृति वाले अधिकारों को निदेशक तत्वों के अंतर्गत शामिल किया गया। निदेशक तत्वों के अंतर्गत शामिल अधिकारों की प्रकृति गैर न्यायोचित होने के बावजूद भी संविधान में इस बात को स्पष्ट किया गया है कि 'ये तत्व देश के शासन में मूलभूत हैं, अतः ये राज्य का कर्तव्य होगा कि इन तत्वों का राज्य की विधि बनाने में प्रयोग करे।' अल्लादी कृष्णस्वामी अययर ने भी इस संबंध में कहा था कि 'लोगों के लिए उत्तरदायी कोई भी मंत्रालय संविधान के भाग 4 में वर्णित उपबंधों की अवहेलना

नहीं कर सकता।' इसी प्रकार डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने संविधान सभा में कहा था कि 'लोकप्रिय मत पर कार्य करने वाली सरकार इसके लिए नीति बनाते समय निदेशक तत्वों की अवहेलना नहीं कर सकती। यदि कोई सरकार इनकी अवहेलना करती है तो निर्वाचन के समय उसे मतदाताओं को इसका उत्तर अवश्य देना होगा।' उन्होंने निदेशक तत्वों को उन अनुदेशों के समान बताया है, जो भारत शासन अधिनियम 1935 के अंतर्गत ब्रिटिश सरकार द्वारा गर्वनर जनरल और भारत की औपनिवेशिक कॉलोनियों के गर्वनरों को जारी किए जाते थे। निदेशक तत्वों के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए डा. राजेन्द्र प्रसाद ने इन्हें 'जनता के कल्याण को प्रोत्साहित करने वाली सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करने वाले तत्व' बताया है। ग्रेनविल ऑस्टिन ने इन्हें 'आर्थिक स्वाधीनता का घोषणा पत्र' कहा है।

निदेशक तत्वों की विशेषताएं –

- आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र की स्थापना करता है।
- जनता के प्रति केन्द्र और राज्य सरकारों के सकारात्मक दायित्वों की घोषणा करता है।
- लोककल्याण्कारी राज्य की स्थापना कि दिशा में विधायिका और कार्यपालिका को निर्देशित करता है।
- जनता के कल्याण को प्रोत्साहित करनेवाली समाजिक व्यवस्था का निर्माण करता है।
- संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित उद्देश्यों को पूरा करने का महत्वपूर्ण साधन है।
- निदेशक तत्व देश के शासन के मूलभूत तत्व हैं, अतः विधि निर्माण के समय इन तत्वों को लागू करना राज्यों का कर्तव्य है।

- आधुनिक लोकतांत्रिक राज्य में आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विषयों में महत्वपूर्ण पथ प्रदर्शक होने के कारण ये न्याय की दिशा में उच्च आदर्श, स्वतंत्रता और समानता स्थापित करने में सहायक होते हैं।
- विकास के सभी क्षेत्रों यथा– शिक्षा, रोजगार, पर्यावरण, पशु-पक्षी, ऐतिहासिक इमारतों, महिला, बच्चों, मजदूर वर्ग आदि के सम्बन्ध में उचित कानून निर्माण के लिए सरकारों को निर्देशित करता है।
- अंतराष्ट्रिय सम्बन्धों की दिशा में राज्यों के लिए उच्च आदर्शों की स्थापना करता है।

निदेशक तत्वों का वर्गीकरण –

नीति निदेशक सिद्धांतों के अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रों में राज्य के कार्य क्षेत्र पर विचार किया गया है, जैसे आर्थिक, सामाजिक, वैधानिक, शिक्षा संबंधी और अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र। लेकिन संविधान में इन तत्वों को किसी भी आधार पर वर्गीकृत नहीं किया गया है। हम अध्ययन की सुविधा और इनकी दशा और दिशा के आधार पर इन्हें तीन व्यापक श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं– समाजवादी, गांधीवादी और उदार बुद्धिजीवी।

समाजवादी सिद्धांत –

निदेशक सिद्धांतो के अंतर्गत कई ऐसे तत्व हैं जो राज्य में एक समाजवादी लोकतंत्र स्थापित करने में सहायक हैं, जिनका लक्ष्य आम जनमानस को सामाजिक और आर्थिक न्याय प्रदान करना है। ये राज्य का एक लोककल्याणकारी रूप प्रस्तुत करते हैं। इस श्रेणी के अंतर्गत हम अनुच्छेद 38, 39, 39क, 41, 42, 43, 43क तथा 47 को शामिल कर सकते हैं। इन अनुच्छेदों में मुख्य रूप से सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय उपलब्ध कराने के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, पोषाहार, जीवीकोर्पाजन का समुचित अवसर, कार्य करने के उपयुक्त वातावरण की उपल्बधता, उच्च जीवन स्तर, प्रतिकुल परिस्थितियों में लोक सहायता पाने का अधिकार तथा सामाजिक और सांस्कृतिक अवसरों की उपलब्धता आदी की बात की गई है।

गांधीवादी सिद्धांत –

निदेशक सिद्धांतों के कुछ तत्व गांधीवादी विचारधारा पर आधारित हैं। ये राष्ट्रीय आंदोलन के समय गांधीजी द्वारा स्थापित विचारों को शामिल करते हैं। निदेशक तत्वों के अंतर्गत शामिल अनुच्छेद 40, 43, 46, 47 और 48 गांधी के विचारों को प्रस्तुत करते हैं। इन अनुच्छेदों में कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने, ग्राम पंचायतों के गठन और उनको सशक्त करने, स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक वस्तुओं पर प्रतिबंध, अनुसूचित जाति और जनजाति तथा समाज के कमजोर वर्गों के सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक स्थिति में सुधार तथा कृषि और पशुपालन जैसे तत्वों को शामिल किया गया है।

उदार बौद्धिक सिद्धांत –

इस श्रेणी में उन सिद्धांतों को शामिल किया गया है जो उदारवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसके अंतर्गत शामिल अनुच्छेद 44, 45, 48, 48क, 49, 50 तथा 51 क्रमशः भारतीय क्षेत्र के समस्त नागरीकों के लिए समान सिविल संहिता, 14 वर्ष की आयु पूरी करने तक सभी बालकों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा, कृषि और पशुपालन में आधुनिक और वैज्ञानिक पद्धतियों को अपनाना, पर्यावरण तथा वन्य जीवों के संरक्षण और संवर्धन,राष्ट्रीय महत्व का घोषित किए गए ईमारतों, स्थानों, वस्तुओं आदी का संरक्षण, न्यायपालिका का कार्यपालिका से पृथक्करण तथा अंतरराष्ट्रीय संबंधों में आदर्श स्थापित करने जैसे तथ्यों का समावेश किया गया है।

निदेशक तत्वों की आलोचना–

विधि निर्माण और एक लोकतांत्रिक राज्य की स्थापना की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका होने के बावजूद संविधान विशेषज्ञों और राजनीतिक विशेषज्ञों द्वारा निम्नलिखित आधार पर निदेशक तत्वों की आलोचना की जाती है–

- ये किसी स्पष्ट दर्शन पर आधारित नहीं हैं।
- अनुच्छेदों में विषयों को महत्व के अनुसार क्रमबद्ध रूप से अंकित नहीं किया गया है।
- पुराने स्मारकों के संरक्षण जैसी अपेक्षाकृत कम महत्व की बातों को महत्वपूर्ण सामाजिक और आर्थिक उपबंधों के साथ रखा गया है।
- गैर-न्यायोचित होने के कारण ये राज्यों पर बाध्यकारी नहीं हैं, अतः इन्हें उपदेश मात्र कहा गया है।
- ब्रिटिश राजनीतिक दर्शन पर आधारित होने के कारण इसे रूढ़िवादी कहा गया है।
- निदेशक तत्वों के महत्व के कारण इससे संवैधानिक द्वंद की स्थिति उत्पन्न होने की आशंका व्यक्त की जाती है।
- 42वें संविधान संशोधन द्वारा संविधान में शामिल किए गए मूल कर्त्तवयों को, भारत के लोगों में राष्ट्रीय एकता की भावना को मजबूत करने वाले तत्व निहित होने के बावजूद भी नीति निदेशक तत्वों के अंतर्गत रखा गया है।

नीति निदेशक सिद्धांतो का महत्व–

निदेशक सिद्धांत नागरीकों के प्रति राज्य के सकारात्मक दायित्व हैं।ये बाध्यकारी रूप से भले ही राज्यों को कार्य करने के लिए आदेशित नहीं कर सकते, लेकिन इनका नैतिक और राजनीतिक महत्व है, जिस कारण राज्य नीति निर्माण के समय इनकी अनदेखी नहीं कर सकते। अतः निम्न बिन्दुओं की सहायता से हम इनके महत्व को समझ सकते है–

- भारत की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति को देखते हूए इसके असंगत और असामयिक होने का तर्क गलत है।
- निदेशक सिद्धांत जनमानस की इच्छाओं और जरूरतों का प्रतिनिधित्व करते हैं, अतः जनता के प्रति उत्तरदायी कोई भी सरकार इसकी अनदेखी नहीं कर सकती।

- ये न्यायालयों के लिए उपयोगी मार्गदर्शक सिद्ध हो सकते हैं, संविधान की मूल भावना की रक्षा की दिशा में ये न्यायालयों की सहायता करते हैं।
- ये संविधान की प्रस्तावना में निहीत मूल भावना को विस्तृत रूप प्रदान करते हैं, संविधान की मूल भावना को समझने में सहायक होते हैं।
- ये नागरीकों के मूल अधिकारों के पूरक होते हैं। ये भाग तीन में उल्लिखित व्यक्तिक अधिकारों का सामाजिक उत्तरदायित्तयों के साथ सामंजस्य स्थापित करते हैं।
- ये शासन के मूल्यांकन का भी आधार होते हैं। जनता सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों का परीक्षण इन संवैधानिक घोषणाओं के आलोक में कर सकते हैं।
- ये राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों की घरेलू और विदेशी नीतियों में स्थायित्व और निरंतरता बनाए रखने में सहायक होते हैं।

मौलिक अधिकारों एवं निदेशक तत्वों में अन्तर–

मूल अधिकार	निदेशक तत्व
1. इनकी प्रकृति नकारात्मक हैं,क्योंकि यह राज्य को कुछ विषयों पर काम करने से रोकते हैं। 2. ये न्यायोचित हैं, इनके हनन पर न्यायालय द्वारा इन्हें लागू करने के लिए आदेश निर्गत किया जा सकता है। 3. इनका उद्देश्य देश में लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था को लागू करना	1. इनकी प्रकृति सकारात्मक है, ये कई विषयों पर काम करने के लिए राज्य को निर्देशित करते हैं। 2. ये गैर-न्यायोचित होते हैं, इन्हें कानूनी रूप में राज्य द्वारा लागू नहीं कराया जा सकता। 3. इनका उद्देश्य देश में सामाजिक एवं आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना करना है।

है। 4. ये कानूनी रूप से बाध्य हैं। 5. ये व्यक्ति विशेष के कल्याण के लिए उसको प्राप्त अधिकारों की बात करते हैं, अतः इनकी प्रकृति व्यक्तिक है। 6.इनको लागू करने या इनके कार्यान्वयन के लिए अलग से कानून निर्माण की आवश्यकता नहीं होती, ये स्वतः लागू हैं। 7.न्यायालय मूल अधिकारों का संरक्षक है, न्यायालय को यह अधिकार है कि वह किसी भी मूल अधिकार के हनन की विधि को गैर–संवैधानिक एवं अवैध घोषित कर सकता है। 8. मौलिक अधिकारों को (अनुच्छेद 21 में वर्णित अधिकारों को छोड़कर) अनुच्छेद 352 के अंतर्गत घोषित आपातकाल कि स्थिति में स्थगित किया जा सकता है।	4. ये कानूनी रूप से बाध्य नहीं हैं, इनका नैतिक और राजनीतिक महत्व है। 5. ये समाज के कल्याण को प्रोत्साहित करते हैं, इस तरह इनकी प्रकृति समाजवादी है। 6. इन्हें लागू करने के लिए राज्यों को अलग से कानून निर्माण की आवश्यकता होती है, ये स्वतः लागू नहीं होते। 7. निदेशक तत्वों का पालन न होने पर न्यायालय किसी प्रकार की कार्यवाही के लिय बाध्य नहीं है। किसी निदेशक तत्व की हनन की स्थिति में न्यायालय उसे अवैध घोषित नही कर सकता। 9. निदेशक तत्वों का जब तक क्रियान्वयन नहीं होता, वे स्थायी रूप से स्थगन की अवस्था में हि रहते हैं।

निदेशक तत्वों की उपयुक्त विवेचना से स्पष्ट है कि संविधान निर्माताओं ने भारतीय जनता के कल्याण के उद्देश्य से राज्यों के लिए कुछ दिशा निर्देश सुनिश्चित किए थे, जिनका अनुसरण करके राज्य एक लोककल्याणकारी राज्य की संज्ञा प्राप्त कर सकते हैं। आजादी के बाद से कई ऐसी विधियों का क्रियान्वयन राज्य सरकारों द्वारा

किया गया है जिनसे निदेशक तत्वों का उद्देश्य पूरा होता प्रतीत होता है। जैसे– 1950 में योजना आयोग का गठन कर देश के विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाएं बनाईं गईं, जिनका उद्देश्य समाजिक, आर्थिक न्याय को प्राप्त करना तथा आय, प्रतिष्ठा और अवसर की असमानताओं को कम करना है, भू सुधार कानूनों को अमल में लाया गया, खादी और ग्रामोद्योग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से नीतियां बनाई गईं, पंचायतों और नगर निकायों को सशक्त करने के लिए 73वां ओर 74वां संविधान संशोधन किया गया, समाजिक और आर्थिक असमानता को दूर करने के उद्देश्य से आरक्षण की व्यवस्था की गई, महिलाओं की सामाजिक स्थिति में सुधार और महिला कर्मचारियों के हितों की रक्षा के लिए कई कानूनों में संशोधन और नए कानून बनाए गए, बैंको का राष्ट्रीयकरण किया गया, खतरनाक बीमारियों जैसे– मलेरिया, टीबी, कुष्ठ, पोलियो, खसरा आदि को समाप्त करने के लिए टिकाकरण अभियान चलाए गए तथा वृद्धावस्था पेंशन, मनरेगा, जन वितरण प्रणाली, सर्व शिक्षा अभियान जैसे ही अनेक सेवाओं को आमजनमानस के लिए सरकार द्वारा क्रियान्वित किया गया।

लेकिन, राज्य सरकारों द्वारा उपरोक्त कदम उठाए जाने के बावजूद भी निदेशक तत्वों के उद्देश्यों को पूर्ण एवं प्रभावी तरीके से प्राप्त नहीं किया जा सका है। भारत का आम नागरीक आर्थिक–सामाजिक खुशहाली के मानकों में आज भी पिछड़ा हुआ है। करोड़ों लोग आज भी सम्मानित जीवन स्तर के मानको के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। स्वच्छ पेयजल, शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षित जीवन, रोजगार, स्वच्छता जैसे तत्वों के आधार पर आकलन किया जाए तो भारत की 60–70 प्रतिशत आबादी आज भी तय मानकों से नीचे कम संसाधनों में गुजरा करने के लिए विवश है। भारत की लगभग 20 प्रतिशत आबादी आज भी गरीबी रेखा से नीचे जावन यापन कर रही है। इनके कारणों पर यदि ध्यान दिया जाए तो अपर्याप्त वित्तीय संसाधन, प्रतिकूल सामाजिक–आर्थिक परिस्थिति, जनसंख्या विस्फोट, केन्द्र–राज्य तनावपूर्ण संबंधों, राजनीतिक इच्छा शक्ति की कमी, जनता में जागरूकता की कमी, जातिवाद, क्षेत्रवाद, समप्रदायवाद जैसी दकियानुसी सोंच का हावी होना, रूढ़ीवादीता, भ्रष्टाचार आदी को इन उद्देश्यों की सफलता में प्रमुख बाधक के रूप में देखा जा सकता है।